संपूर्ण समाज
को संगठित करना
यही संघ कार्य है। संगठन
जीवमान समाज
की स्वाभाविक अवस्था है

केशव माधव पुस्तकालय
सोमनाथ मन्दिर के पास, पाली

संगठन
अर्थात् अंगांगीभाव सह
संघ की कल्पना
सामूहिक है। सामूहिक
क्रिया द्वारा समष्टि

हमारी राष्ट्रीयता

एक तर्कपूर्ण समर्थन

केशव माधव पुस्तकालय
सोमनाथ मन्दिर के पास, पाली

संस्कार द्वारा मनुष्यनिर्माण का कार्य संघ
का उद्देश है। संघ के विषय में
वादविवाद संघ के
लिये उपकारक सिद्ध हुवे है। विशेषज्ञ के हाथोंमें पडनेपर
क्षुद्र से क्षुद्र वस्तुसे भी उत्तम फल की
प्राप्ति होती है। इस दृष्टिसे
संघ संघटनशास्त्रका...

...पुस्तकालय
... मन्दिर के पास, पाली

श्रीमान् दत्तोपंत ठेंगडी

१/-

हमारी राष्ट्रीयता

एक तर्कपूर्ण समर्थन

श्रीमान् दत्तोपंत ठेंगड़ी

निवेदन

दि. २६ सितम्बर १९७० को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ नागपुर की ओर से नागपुर के महाविद्यालयीन छात्रों का सम्मेलन हडस हाईस्कूल के प्रांगण में आयोजित किया गया था। लगभग १५०० छात्र, दो सौ से अधिक प्राध्यापक तथा अन्य महाविद्यालयीन शिक्षण क्षेत्र से संबधित नागरिक इस कार्यक्रम में उपस्थित हुए थे। इस अवसर पर राज्यसभा के सदस्य, भारतीय मजदूर संघ के महामंत्री तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अनुभवी कार्यकर्ता श्रीमान् दत्तोंपंत जी ठेंगड़ी द्वारा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य के स्वरूप का तर्कशुद्ध विवेचन किया गया। उपस्थित छात्र, प्राध्यापक उनके भाषण से इतने प्रभावित हुए कि उनमें से अधिकांश ने इच्छा व्यक्त की, कि भाषण प्रकाशित किया जाए।

श्रीमान् दत्तोंपंत जी ने भी भाषण के प्रकाशन की अनुमति दी इसके लिए हम उनके आभारी हैं।

विलंब से क्यों न हो, भाषण प्रकाशित हो रहा है। भाषण में जो संदर्भ आए हैं वे अंत में स्वतंत्र रूप से एकत्र दिए गए हैं। आशा है कि सभी को इस भाषण के अनुशीलन से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य का विशुद्ध स्वरूप समझने में सहायता मिलेगी।

नागपुर

पु.मो. सोनटक्के

दि. २६-११-७०

कार्यवाह, भारतीय विचार साधना

॥ श्री:॥

नागपुर का यह सौभाग्य रहा है कि यहां हिन्दुस्तान की राष्ट्रशक्ति का उदय हुआ। सन् १९२५ में इसी नगर में परम पूजनीय स्वर्गीय डॉक्टर हेडगेवार जी ने संघ की नीव डाली और यहीं से संघ के कार्य का चारों ओर विस्तार हुआ। तब से आज तक संघ की दृष्टि से कई अनुकूल-प्रतिकूल अवसर आए परन्तु सभी परिस्थितियों में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आगे बढ़ता हुआ प्रगति करता गया और आज सभी प्रदेश, सभी जिलों, सभी नगरों और ग्रामों में भी उसकी शाखाएँ पायी जाती हैं।

भ्रान्त धारणाएँ

यद्यपि यह काम पुराना है तथापि यह दिखाई देता है कि इसके विषय में कई क्षेत्रों में सम्यक् जानकारी नहीं है। इतना ही नहीं भ्रान्त धारणाएँ भी हैं। इसके कारण कभी कभी संघ के स्वयंसेवक सोचने लगते हैं कि जब अपना संघ उत्तम है, तब अन्य लोग इसे क्यों नहीं समझते हैं ? क्यों इसका विरोध करते हैं ? इसे भूल क्यों समझते हैं ? इसके प्रति क्यों उदासीन रहते है ? अपने कार्य के संबंध में ऐसी प्रतिक्रियाएँ क्यों हैं ? स्वयंसेवकों के मन में ऐसे विचार स्वाभाविक रूप से आते हैं। उनको कभी कभी ऐसा लगता है कि जो जो विरोध करनेवाले हैं संभवत: सारे ही अप्रामाणिक होंगे अन्यथा अच्छी बात का विरोध क्यों किया जाता ? किन्तु ऐसी बात नहीं है। जो संघ के समर्थक हैं, वे जैसे प्रामाणिक हैं, वैसे ही जो उदासीन हैं उनमें भी कई प्रामाणिक पाये जाते

हैं और विरोध करनेवालों में भी कई प्रामाणिक लोग पाये जाते हैं। यह बात ठीक है कि आज के युग में लोग बहुत प्रगतिशील हो गये हैं और इसके कारण जिसमें अपना तुरन्त कुछ लाभ होगा वे ही बातें बोलना और करना युगधर्म हो गया है और जब यह दिखता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को गाली देने से अपना कुछ लाभ हो सकता है, कहीं ना कहीं 'गद्दी' मिलने की संभावना है तब गाली देना भी एक आवश्यक बात मानी जाती है। परन्तु सभी लोग ऐसे नहीं हैं। प्रामाणिकता से संघ न समझने के कारण उदासीन रहने वाले या विरोध करने वाले लोग हैं। तो इसमें क्या उनका ही कसूर है ? ऐसा नहीं लगता। इसमें तो कुछ संघ का भी दोष है। संघ वस्तु ही ऐसी है कि यदि बाहर का व्यक्ति इसको तुरन्त न समझ सका तो उसको दोष देना ठीक नहीं है। किसी भी नई वस्तु की जानकारी सर्वसाधारण मनुष्य किस आधार पर प्राप्त कर लेता है ? मनोविज्ञान का यह नियम है कि नयी वस्तु की जानकारी पुरानी देखी हुई, अनुभव की हुई वस्तुओं के आधार पर ही की जाती है, चाहे वह साम्य से हो या वैषम्य से हो, चाहे सादृश्य से हो या वैदृश्य से हो या "कम्पेयर एंड कोन्ट्रास्ट " (Compare and contrast) से। इसलिए जो भाषाशास्त्र निर्माण हुआ है उसमें तरह तरह के अलंकार भी निर्माण हुए हैं जैसे उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक। ये सारे अलंकार किस लिए हैं ? तो न देखी हुई वस्तु को समझने में सुविधा हो इसलिये जैसे हम कहते हैं कि भगवान् के चरण कमल के समान हैं। अब किसी ने भगवान् के चरण तो देखे नहीं। अब उनके बारे में कल्पना कैसे की जाए ? जानकार लोगों ने कहा हमने भगवान, के चरण नहीं देखे है किन्तु कमल देखा है। इसलिए हम अनुमान लगा सकते हैं कि जैसा कमल कोमल होता है वैसे ही भगवान, के चरण कोमल होंगे, कमल

सुगंधित तथा पवित्र होता है वैसे ही चरण भी सुगंधित और पवित्र होंगे। इस प्रकार कुछ न कुछ ज्ञान हमें हो जाता है। अब इसी प्रकार बाहर का व्यक्ति भी संघ को समझने का प्रयास करता है।

संघ याने संपूर्ण हिन्दू-समाज

हमारी यह धारणा है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अर्थात् हिन्दूसमाज, नि:शैष हिन्दूसमाज है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ यह पंथ, सम्प्रदाय, संस्था या दल नहीं है; यह समाज का एक विभाग नहीं है। समाज के अंतर्गत एक संगठन खड़ा करना संघ का प्रयास नहीं है वरन् सम्पूर्ण समाज को ही संगठित अवस्था में लाना उसका प्रयास है। इसलिए संघ और समाज समव्याप्त है, संघ का दायरा उतना ही विस्तृत है जितना समाज का। संघ अर्थात् समाज। परन्तु आज अन्तर दिखता है। आज हिन्दूसमाज अपनी आदर्श अवस्था में नहीं है, वह कुछ विघटित हुआ है। वह सामाजिक, राष्ट्रीय चारित्र्य से गिरा हुआ है। अत: यह आवश्यक है कि यह चारित्र्य पुन: निर्माण किया जाए। विघटन दूर हटाया जाए तथा समाज में संगठन पुन: निर्माण किया जाए। इस दृष्टि से प्रयास भी चल रहा है। किन्तु यह प्रयास करने वाली एक संस्था के नाते संघ नहीं है अपितु वह हिन्दू समाज है। हाँ, यह बात ठीक है कि जो संघ की संगठन की कल्पना है उस दृष्टि से जो समाज का कुछ संगठित हिस्सा है वह आज संघ स्थान पर दिखता है तथा जो इस प्रकार संगठित नहीं है वह संघस्थान के बाहर दिखाई देता है। पर धीरे धीरे जो यह संघस्थान पर दिखने वाली राष्ट्र की प्रतिकृति है "नेशन इन मिनिएचर" (Nation in miniature) उसकी सीमाएँ बढ़ाते बढ़ाते सभी हिन्दुओं को सुसंगठित करना है अर्थात इस तरह सभी हिन्दू संघ के ही हैं।

केवल इतना ही अन्तर है कि कुछ लोग इसकी जानकारी रखते हैं इसलिए संघस्थान पर आते है, कुछ जो जानकारी नहीं रखते हैं उन्हें जानकारी होने में कुछ देर है अत: वे संघस्थान पर नहीं आते। इसलिए हम कहते हैं कि हमारे कुछ "पेटेन्ट" (Patent), व्यक्त-स्वयंसेवक हैं जो शाखा पर आते हैं और हमारे कुछ "लेटेन्ट" (Latent),अव्यक्त-स्वयंसेवक हैं जो शाखा पर नहीं आते हैं। यद्यपि वे कभी कभी भूल से विरोध भी करते हैं तथापि हर एक हिन्दु हमारा स्वयंसेवक है। कुछ "एक्चुऽल" (actual) प्रत्यक्ष स्वयंसेवक होंगे, कुछ "पोटेंसिअल" (Potential) संभाव्य स्वयंसेवक होंगे तथापि हर एक हिन्दू स्वयंसेवक है। इस बात को वह जानता हो अथवा न जानता हो, हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसे वह जानकारी दें।

संगठन का अर्थ

जब हम कहते हैं कि हमें हिंदू समाज का संगठन करना है, तब यह समझना होगा कि संगठन शद्ब से हमारा क्या अभिप्राय है? संघ ने संगठन शद्ब का विशेष अर्थ में प्रयोग किया है। संगठन से स्वयंसेवक दल यह अर्थ हमें अभिप्रेत नही। कई राजनैतिक दल तथा संस्थाएँ अपने स्वयंसेवक दल खड़ा करते हैं। सम्मेलनों तथा समारोहों में ये लोग बेजेज लगा कर इधर से उधर घूमा करते हैं। उनके कारण व्यवस्था के स्थान पर अव्यवस्था ही निर्माण होती है। हमारी यह धारणा नहीं है कि इस प्रकार के वालेंटियरों का जमघट संगठन है। संगठन से हमारा अर्थ है व्यक्ति और समाज के आदर्श संबन्ध। वे आदर्श सम्बन्ध कैसे होने चाहिए इस विषय में संघ की एक विशेष धारणा है। हिंदू समाज़ की यह प्राचीनतम धारणा रही है कि जिस प्रकार शरीर और उसके

अंग-प्रत्यंग के परस्पर संबंध होते हैं, उसी प्रकार समाज और एक एक व्यक्ति और व्यक्ति समूह के बीच होना चाहिए। मनुष्य के शरीर में विभिन्न अवयव होते हैं तथा प्रत्येक का आकार तथा स्थान भी भिन्न भिन्न होता है। हर एक का कार्य भी भिन्न भिन्न होने से विकास की दिशा भी भिन्न भिन्न है। यह भी सम्भव नहीं है कि सभी अवयव एक ही शरीर के अंग होने से कोई भी अवयव अन्य दूसरे अवयव का काम कर सके। यदि हमने कहा कि सभी समान हैं तो यह कथन आध्यात्मिक स्तर पर सही है परन्तु भौतिक धरातल पर उतरकर यदि उस सिद्धान्त को चरितार्थ करना चाहें और यह कहें कि कान और नाक दोनों समान हैं, अत: कान का विभिन्न राग-रागिनियों का सम्यक् ज्ञान तथा स्वरमालाओं का सूक्ष्यता से परिचय कराने का काम नाक को करना चाहिए, तो संभव है कि हम रेडियो से नाक सटाकर सौ वर्ष तक भी बैठे रहें तो भी नाक नहीं बता सकेगा की आसावरी कौनसी है और भैरवी कौनसी है। हर एक अवयव का कार्य भिन्न होता है तथा उसकी विकास की दिशा भी भिन्न होती है। ऐसा होते हुए भी यह बात नहीं है कि अपना शरीर अवयवों का "फेडरेशन" (Federation) है या "कोनफेडरेशन" (Confederation) है। इसमें एकात्मता है। आकार, स्थान, कार्य, विकास की दिशा भिन्न भिन्न होते हुए भी एकात्मता है। और सभी अवयव मिलकर एक सजीव इकाई है। जब पैर में चोट लगती है तो आँखों से आँसू आते हैं , तब आंख यह विचार नहीं करती कि चोट तो पैर में लगी है, मेरा क्या संबंध है यदि मसूड़े में पीड़ा हो तो रात में सारा शरीर ऐसा नहीं सोचता की मसूड़े में पीड़ा है अत: वह अपना देख लेगा मैं तो चैन की नींद सोऊंगा। यदि सिर पर कोई प्रहार करने आता है तो अपने हाथ उसकी रक्षा के लिए कंधों से ऊपर चले जाते हैं। यह इसलिए नहीं

होता है कि वैसा भारतीय संविधान में लिखा है या मनुस्मृति में लिखा है। वह तो तत्काल स्वाभाविक रूप से होता है। हाथ यह नहीं सोचता कि जो गड़बड़ हो रही है वह जम्मू-कश्मीर में, हम तो मध्यप्रदेश में आराम से बैठे हैं। और जब यहां तक शत्रु आ जाएगा तब देख लेंगें। अवयवों का अलग अलग रूप होना विविधता है, भेद नहीं। विविधता के कारण सौंदर्य भी है। यदि ऐसी विविधता नहीं होती और शरीर के सारे अवयव एक से होते तो शरीर बड़ा भद्दा दिखता। विविधता के कारण सौंदर्य भी निर्माण होता है तथा उसमें एकात्मता का रस होता है। जब संघ के विषय में हम विचार करते हैं तब संघ जिस पारिभाषिक शद्बावली का प्रयोग करता है उसे समझना होगा। हर एक विज्ञान की अपनी पारिभाषिक शद्बावली होती है। साधारण मनुष्य जिन शद्बों का प्रयोग करते हैं उनके आधार पर नहीं सोचा जाता। इस दृष्टि से संघ ने कहा है ,कि संगठन किसी भी जीवमान समाज की स्वाभाविक अवस्था है और यदि वह अवस्था न हो तो इसका अर्थ यहीं समझना चाहिए कि समाज या तो जीवित नहीं है या वह कम से कम होश में नहीं है।

संगठन अर्थात् अङ्गागी भाव

संगठन से हमारा अभिप्राय अङ्गागी भाव है। हर एक अङ्ग-प्रत्यङ्ग के मन में यह विश्वास तथा धारणा रहे कि वह सम्पूर्ण शरीर के साथ एकात्म है। इस अनुभूति और साक्षात्कार को संघ ने संगठन संज्ञा दी है। इस तरह का अङ्गागी भाव अर्थात् संगठन सम्पूर्ण समाज में निर्माण करने का संघ का निश्चय है। अपना समाज विशाल है, तथा इसमें तरह तरह के मत-मतान्तर, पंथ-संप्रदाय, परस्पर विरोधी राजनैतिक दल हो सकते हैं। परन्तु सभी पंथों, सम्प्रदायों,

राजनैतिक दलों, मत-मतान्तरों के साथ हिन्दूसमाज़ अर्थात् रा. स्व. संघ है। हमने यह कहा है कि रा. स्व. संघ अर्थात् सम्पूर्ण हिंदू समाज तथा नि:शेष हिन्दूसमाज़ अर्थात रा. स्व. संघ है।

संघ के कार्यक्रम

अब जब यह संघ का स्वरूप दूसरे को बताया जाता है तब कल्पना कीजिए कि वह कैसे इसे समझेगा ? जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ कि जो कुछ देखा है उसी के आधार पर मनुष्य नयी चीज का ग्रहण कर सकता है। ऐसी बात नहीं है, कि लोग संघ को कतई नहीं समझते हैं। परन्तु अपने अपने ढंग से समझते है। जब वे संघ के स्वयंसेवकों को दण्ड, खड्ग, शूल आदि चलाते हुए देखते हैं तो सोचते हैं कि रा. स्व. संघ एक अखाड़ा या व्यायामशाला होनी चाहिए क्योंकि लोगों ने "व्यायामशाला देखी है जहां दण्ड, खड्ग, शूल आदि चलाने की शिक्षा दी जाती है। मैं प्राय: दौरे पर रहता हूँ तथा अनेक लोगों से मिलता रहता हूँ। संघ के स्वयंसेवक के नाते मुझसे प्राय: लोग संघ के विषय में प्रश्न पूछा करते हैं। उनमें से एक व्यक्ति ने एक बार मुझसे से कहा कि आप चार सदियों के पूर्व के युग में रहते है, यह एटम बम का युग है और आप संघवाले लाठी चलाते हो ! अब वास्तव में उन्होंने जो देखा है उसके आधार पर उनका प्रश्न सहीं है। प्रश्नकर्ता स्वयं एक राजनीतिज्ञ थे तथा उन्होंने संसद में ओजस्वी शद्बों में कहा था कि भारत को एटम बम नहीं बनाना चाहिए। परन्तु उन्हें एटम बम के युग में संघ में दी जानेवाली दण्ड की शिक्षा कालबाह्य प्रतीत हुई ! उनकी दृष्टि में एटम बम के युग में लाठी से कुछ नहीं हो सकता है। अब जैसे हम लाठी लेकर ही सब कुछ करने वाले हैं। वैसे तो

बंकिमचंद्र ने अपने 'कमलाकान्त' उपन्यास में लाठी के विषय में इस प्रकार कहा है". लाठि तोमार दिन गिये छे किन्तु सुशिक्षित हाथे पऽडिले तुमि पारो नाय एमन कोई काज नेई। (हाय लाठी तुम्हारे दिन अब चले गये हैं किन्तु यदि अच्छे पढ़े लिखे मनुष्य के हाथ में पड़ी तो तू ऐसा कोई काम नहीं जो नहीं कर सकती। रा. स्व. संघ ने यह कभी नहीं कहा है कि हम एटम बम का सामना लाठी से करेंगे। वैसे इस वाक्य का उच्चारण विश्व के इतिहास में एक बार ही हुआ है। वह वाक्य है, "यदि मौका पड़ा तो एटम बम का मुकाबला हम हाथ में लाठी लेकर करेंगे।" इस तरह का बहादुरी के वाक्य का उच्चारण एक ही बार हुआ और वह भी लंदन में स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा। उनके सिवाय किसी ने इस तरह की बात नहीं कही है।

कार्यक्रमों का उद्देश्य हृदय पर संस्कार

रा. स्व. संघ में जो दंड, खड्ग, शूल, बौद्धिक, संघगीत आदि कार्यक्रम होते हैं उनका उद्देश्य व्यक्ति-व्यक्ति के हृदय पर संस्कार अंकित करना है। सामूहिक क्रिया द्वारा समष्टिगत संस्कार अंकित होते हैं। इसलिए सामूहिक क्रिया का महत्त्व है। यह बात उनके पल्ले नहीं पड़ती क्योंकि उन्होंने यें सारे विचार सुने ही नहीं है; नहीं कभी ऐसा कोई काम देखा है। उन्होंने देखी है तो केवल व्यायामशाला ! वे कहते हैं कि संघ व्यायामशाला तो है किन्तु बहुत पुराने ढंग की, क्योंकि एटम बम के स्थान पर लाठी का उपयोग कर रहे हैं। कुछ लोग यह सोचते हैं कि संघ सैनिक संगठन होना चाहिए। और यहां प्रजातन्त्र का अस्तित्व ही नहीं है। अब वर्तमान समय की विभिन्न संस्थाओं का आचार-विचार देखकर जिन्हें यह लगा हो कि यह हिटलर का दल है तो मुझे लगता है कि

उसमें उनका कोई दोष नहीं। यह ठीक है कि संघ भले ही कहता हो कि हम अनुशासित हैं और उसका यह कथन ठीक भी है परन्तु जहाँ लोगों की धारणा यह बन चुकी है कि प्रजातंत्र तथा अनुशासन साथ साथ नहीं चल सकते वहाँ यदि आप इस ढ़ंग से एक कतार में बैठते हों तो उन्हें बड़ा आश्चर्य होगा। अब मुझे विभिन्न स्थानों पर अनेक राजनैतिक दलों के मंच पर उपस्थित होने का अवसर मिलता है। वहाँ के वातावरण का मुझ पर भी इस तरह का असर होकर मुझे भी लगने लगा कि संघ में कुछ गड़बड़ है- डिक्टेटरशिप अवश्य है। राजनैतिक दलों के कार्यक्रमों का वातावरण बड़ा डेमोक्रेटिक रहता है। कोई सिगरेट पीता है, मंच पर तकिये के सहारे बैठने के लिए धक्का-मुक्की होती है, लोग आते-जाते रहते हैं, इधर माईक पर नेता का भाषण होता है, उधर मंच पर अन्य नेतागण चायपान करते हैं। अब जिसको इस वायुमण्डल का अभ्यास हो गया हो वह जब संघ में लोगों को एक कतार में बैठे हुए देखता है तो वह कहेगा ही कि यह हिटलरशाही है। जब संघ पर प्रतिबंध लगा था तब बंगाल के बैराकपुर नामक स्थान के वॉलीवाल क्लब के ५-६ पदाधिकारियों को इसलिए गिरफ्तार किया गया था कि वे निर्विरोध चुन लिये गये थे। मैं उन दिनों बंगाल में था और यह समाचार विदित होते ही मैं वहाँ गया और वहाँ के सर्किल इन्सपेक्टर से उन पकड़े गये व्यक्तियों के बारे में पूछताछ की। इन्सपेक्टर ने कहा कि वे लोग संघ की शाखा लगाने के अपराध में पकड़े गये हैं। मैने उनसे कहा कि जब से संघ पर पाबंदी लगी हुई है तब बैराकपुर में कोई संघ की शाखा नहीं चल रही है, फिर आपने इन लोगों को कैसे गिरफ्तार कर लिया ? उन्होंने कहा कि इनके द्वारा चलाये गये वॉलीवाल क्लब क्लब के ४० सदस्य होते हुए भी अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष आदि के चुनाव बिना

मारपीट किए एकमत से हुए यह एक ही बात इनका रा. स्व. संघ का स्वयंसेवक होना प्रमाणित करती है। अर्थ यह है कि जिसको जैसा लगता है, अनुभव होता है वह उसके आधार पर संघ की धारणा कर लेता है। पूना में मेरे एक परिचित राजनैतिक वयोवृद्ध नेता हैं। जब जब मैं पूना जाता था तब तब मैं उनके दर्शन किये बिना पूना नहीं छोड़ता था। वे मुझे हमेशा घर की देहली के बाहर से ही बिना चाय पिलाये विदा करते थे। परन्तु पूना के 'पान शैत काण्ड' के उपरान्त जब मैं पूना गया और उनसे मिलने गया तो उन्होंने मेरी बड़ी आवभगत की, चाय पिलाई। मुझे उनके व्यवहार से बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर जब उनको स्वयं संघ के विषय में बात छेड़ते हुए देखा तो मैं और भी आश्चर्यचकित हो गया, क्योंकि वे संघ के कट्टर दुश्मन थे। उन्होंने मुझसे कहा कि डॉक्टर हेडगेवार जी बड़े दूरदर्शी थे। क्योंकि उन्होंने यह सोचकर कि 1961 में पूना में बड़ी बाढ़ आएगी 1925 में ही नागपुर में एक स्थायी सहायता समिति का निर्माण किया। उस समिति के स्वयंसेवकों ने पानशेत की बाढ़ में लोगों के प्राण बचाये, उनके कारण ही मेरे भी प्राण बच पाये। मैंने मन ही मन कहा की चलो डाक्टर हेडगेवार को एक सर्टिफिकेट तो मिल गया। इस तरह जिसको जैसा अनुभव आता है वैसा वह संघ को देखता है। किन्तु, संघ का जो वास्तविक स्वरूप है वैसा वे नहीं देख पाते। वे संस्था, संप्रदाय, सैनिक संगठन, समझ सकते है परन्तु वे यह नहीं समझ सकते की संघ अर्थात् संपूर्ण हिन्दू समाज है। इसका कारण इस प्रकार का संगठन निर्माण करने का प्रयास इससे पूर्व नहीं हुआ है; जो हुआ नहीं उसको समझना कठिन है। इसलिए मैंने कहा कि भाषाशास्त्र में जितने अलंकार है उनका अर्थ यह है कि परिचित वस्तु के आधार पर अनोखी वस्तु का ज्ञान कराना। किन्तु

भाषाशास्त्र में और भी एक अलंकार है जिसका नाम 'अनन्वय' है। उसका उदाहरण साहित्यशास्त्र में इस प्रकार दिया गया है :-

गगनं गगनाकारं सागर: सागरोपम:।

रामरावणयोयुद्धं रामरावणयोरिव॥

इसका अर्थ है आकाश आकाश के समान है, महासागर महासागर के समान है तथा राम-रावण युद्ध की समानता राम रावण युद्ध से ही हो सकती है। इसी प्रकार जब कहा जाता है की संघ संघ के जैसा है तो बाहरी व्यक्ति क्या समझेगा ? वह नहीं समझ सकता। इसलिए मैं ऐसा समझता हूं कि 'संघ' एक 'अनन्वय' अलंकार होने के कारण बाहर के लोग सद्‌हेतु, सद्भावना से भी समझने का प्रयत्न करेंगे तो भी पर्याप्त समय लगेगा और मैं अनुभव करता हूं कि जब तक संघ के साथ प्रत्यक्ष परिचय नहीं होता तब तक संघ समझने में कठिनाई रहेगी।

मैंने स्वयं इस बात का अपने जीवन में अनुभव किया है। तब मैं मोरिस कोलेज में पढता था। मैं और मेरे अन्य साथी अपने आप को बहुत ही प्रगतिशील विचारों के समझते थे। कुछ मित्रों को लाठी लेकर संघ में जाते हुऐ देखकर हम लोगों को उन पर दया आती थी। परन्तु कुछ स्वयंसेवक मुझे संघ में ले जाने के लिए मेरे पीछे पड़ गये। संघ ने सिखाया है कि समाज पर आक्रमक प्रेम करो ? अर्थात् मान न मान मैं तेरा मेहमान। मेरे स्वयंसेवक बंधु मुझे भरसक संघ समझाने का प्रयास करते थे पर उनकी यह बात मेरी समझ में नहीं आती थी। यह बात की "संघ का उद्देश्य मनुष्य का निर्माण करना है," मेरी समझ के परे थी। अब यह संघ की परिभाषा है - उसका अपना विशिष्ट

अर्थ है। वह न समझने से अनर्थ भी हो सकता है। ईसा मसीह ने कहा है कि "द लेटर किलएथ" (The letter killeth) शद्बों के कारण हत्या भी हो सकती है। जब हम मनुष्य है तो मनुष्य का निर्माण करना निरर्थक लगा। परन्तु उन्ही दिनों हमारे की पत्रिका में प्रकाशित एक कविता देखने को मुझे मिली जो इस प्रकार थी :-

Wanted man!
Not systems, fit and wise!
Not faith, with rigid eyes!
Not wealth, in mountain piles!
Not power, with gracious smiles
Not even the potent pen.
Wanted Men!

इस कविता को पढ़ने के बाद संघ की मनुष्य निर्माण की बात का भी स्मरण हो आया। इसके बाद एक और रोचक प्रसंग पढ़ने को मिला। ग्रीस के सर्वश्रेष्ठ विचारक डायजैनिस एक बार भरी दुपहरी में हाथ में लालटेन लेकर अथेन्स के भरे बाजार में आए। लोगों के पूछने पर उन्होंने कहा कि मैं मनुष्य को ढूंढ़ रहा हूं। लोग बड़े अचम्भे में पड़ गये। उन्होंने कहा कि हम सारे मनुष्य ही तो हैं, फिर, उनकी खोज क्यों करते हो ? डायजेनिस बहुत ही क्रोधित हो गये। और आवेश में कहा हट जाओ, मुझे मनुष्य चाहिए, बौने नहीं (Get out, I wanted men, not pygmies) ! संघ वाले भी मनुष्य चाहिए कहते हैं, इधर कवि और डायजेनियस भी वहीं बात कहते हैं, अवश्य इसमें कुछ अर्थ होगा। उन्हीं दिनों स्वामी विवेकानन्द के चित्र के नीचे एक वाक्य पढने को मिला जो इस

प्रकार था- "I wanted men with capital 'M' ! तब समझ में आया कि मनुष्य निर्माण भी कोई प्रक्रिया है। केवल दो हाथ, दो पैर होने से मनुष्य नहीं बनता है तो वैसे मनुष्य बनाने के लिए कुछ करना पड़ता है। तब संघ के प्रति आस्था बढ़ी और फिर ज्ञात हुआ कि मनुष्य बनने के लिए कुछ संस्कार आवश्यक हैं।

अब यह बताना कठिन है कि संघ में कितने दिन तक जाने से कितने संस्कार होंगे। इसका कोई गणनयंत्र तो नहीं है। संस्कारों की प्रगति इतनी सूक्ष्म होती है, कि उसे ग्रहण करने वाले को भी उसका ज्ञान नहीं हो पाता है। उन्हें वह अनजाने ग्रहण करता रहता है। नवजात शिशु हर क्षण बढ़ता रहता है, परन्तु माता के लिए यह बताना कठिन है कि चौबीस घंटे के भीतर वह कितना बढ़ा होगा। हां, उसी बालक को दस वर्ष के पश्चात् देखने पर यह बताना सरल होता है कि वह कितना बढ़ा है। उसी प्रकार संस्कारों की प्रगति होती रहती है और कठिन परीक्षा के समय ही संस्कारयुक्त और संस्कारविहीन व्यक्ति की पहचान होती है। एक सुभाषित है।

काक: कृष्ण: पिक: कृष्ण: को भेद: पिककाकयों:।

वसंतसमये प्राप्ते काक: काक: पिक: पिक:॥

वसंत ऋतु में कोयल और कौवा पहचाने जाते हैं।

परीक्षा के समय राष्ट्रभक्ति की कसौटी

वैसे संघ में आने वाले और संघ में न आने वाले दोनों में क्या अंतर है ? परन्तु जब परीक्षा का समय आता है तब संस्कारों का प्रभाव दिखाई देता है।

बहुत अधिक उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है। संघ के स्वयंसेवकों ने समाज के घटक के नाते कई काम किये हैं। संघ संघ के नाते काम नहीं करता है क्योंकि संघ कोई संस्था नहीं है परन्तु समाज के घटक के नाते स्वयंसेवकों ने कई काम किए हैं। यहाँ एक छोटा सा उदाहरण पर्याप्त होगा। १९६५ में जब भारत पर पाकिस्तान का आक्रमण हुआ था तब भारत-पाक सीमा पर स्थित फाजिल्का शहर में सरकार ने "नागरिक सुरक्षा" का कार्यक्रम प्रारंभ किया। वहाँ के प्रमुख राजनैतिक दल के जिलाध्यक्ष को नागरिक सुरक्षा समिति का अध्यक्ष चुना गया। कुछ समय बाद जब एक मंत्रीमहोदय वहाँ निरीक्षण के लिए आए तब संबंधित राजनैतिक दल के लोगों ने उनसे शिकायत की की जिलाधीश का आचरण बहुत ही पक्षपातपूर्ण है क्योंकि वे संघवालों को ही नागरिक सुरक्षा में भर्ती होने के लिए बढ़ावा दे रहे हैं, संघ वाले ही वहाँ भर्ती हो रहे हैं और शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। हमारे दल के लोगो को निमंत्रित नहीं किया जाता। तब मंत्रीमहोदय क्रोध से आगबबूला हो गये और उन्होंने तुरन्त जिलाधीश को अपने सामने उपस्थित होने का आदेश दिया। जिलाधीश के आते ही मंत्रीमहोदय बरस पड़े, "क्या तुम पागल हो ? अरे, ठीक है कि राष्ट्र पर आक्रमण हुआ है। राष्ट्र तो बच ही जाएगा। जो होगा सो देखा जाएगा, परन्तु पहले अपने दल का हित तो देखना चाहिए। हमारे दल के लोगों को अगुआपन क्यों नहीं देते हैं, तब जिलाधीश ने विनम्रता से कहा, मान्यवर ! मंत्रीमहोदय जी ऐसी बात तो नहीं है। आपकी पार्टी के जो जिलाधीश हैं उनको ही मैंने समिति का सर्वेसर्वा बनाया है। परन्तु जब दूसरे दिन से शिक्षा देने का कार्यक्रम प्रारंभ हुआ तब संघ वाले निकर पहनकर बिल्कुल निष्ठापूर्वक वहाँ आने लगे और शिक्षा-दीक्षा लेने लगे। अब मैं क्या करूं कि आपके जिलाध्यक्ष

आए भी नहीं। तब मंत्रीमहोदय ने कहा कि आपका काम था कि उन्हें बुलाने जाते। उत्तर में जिलाधीश ने कहा कि जब मैं उनके बँगले पर चौथे दिन पहुंचा तब जिलाध्यक्ष ने उत्तर दिया कि जिलाधीशजी! आप मुझे पागल मत समझिए। मैं इन संघवालों के समान आवारा नहीं हूँ। उन्हें रोज आने को क्या होता है। न आगा न पीछा। मैं तो बाल बच्चे वाला गृहस्थ हूं। मेरे तो नन्हें नन्हें बच्चे हैं।" अब उनका सब से छोटा लड़का एम.एस.सी. पढ़- रहा था! तो परीक्षा के समय इस बात का पता चलता है कि संस्कारित हृदय और असंस्कारित हृदय कौनसा है।

एक घंटे के कार्यक्रम में कई लोग पूछते हैं कि "भाई ! हम संघ स्थान पर आकर क्या करें ? एक घंटा हमारा व्यर्थ खर्च होता है। क्योंकि वहाँ आप ऐसा कौनसा बड़ा काम करते हैं ? कहीं गीत गाते हो, कहीं थोड़ी लाठी चला लेते हो, कहीं कबड्डी खेलते हो। ये तो बहुत ही साधारण बाते हैं इनसे क्या होगा ? परन्तु मनुष्य की परिपूर्णता में छोटी बातों का भी बड़ा योगदान होता है। एक बार योरोप के एक बड़े चित्रकार मायकेल एंजलो ने एक उत्तम चित्र बनाया और एक साहब को दिखाया। चित्र देखने पर उक्त सज्जन ने उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की। तब माइकेल एंजलो ने उनसे कहा कि "मैं इस चित्र में और भी सुधार करने वाला हूँ।" छ: महीने के बाद वे सज्जन चित्र देखने पुन: पधारे। माइकेल ने जो चित्र में सूक्ष्म सुधार किये थे वे उन्हें समझाये। तब उक्त सज्जन कह उठे यह तो साधारण सा परिवर्तन किया गया है उनसे क्या अंतर पड़ने वाला है। मुझे तो पहले जैसा ही लगता है। माइकेल उक्त कथन पर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने कहा कि "All right sir! they are trifles but nevertheless all these trifles put together make perfection and perfection

is net trifle." जो छोटी छोटी बाते हैं लोग उनको ठीक नहीं समझते। वे कहते हैं कि चीन, पाकिस्तान की बात करना राष्ट्रभक्ति है, कबड्डी खेलने से क्या होगा? परन्तु यह सोचना भूल है। सामूहिक क्रियाओं द्वारा सामूहिकता के संस्कार होते हैं। और इसलिए वे छोटी छोटी बातें संघस्थान पर होती हैं। उनका अपना महत्त्व है। सन् : 1946 में एक बार कलकत्ता के निवासकाल के समय प. पू. गुरुजी के साथ मेडिकल कॉलेज के प्राध्यापकों के चायपान के आयोजित किये गये कार्यक्रम के समय एक प्राध्यापक ने कहा था कि "हमें आपका संघ बड़ा अच्छा लगता हैं, यहाँ संस्कार आदि होते हैं, यह सब ठीक है, किन्तु एक बात हम समझ नहीं पाते हैं कि कब्बडी, दंड, खड्ग आदि के द्वारा यह राष्ट्रनिर्माण का कार्य कैसे हो सकेगा ? क्योंकि ये सारे कार्यक्रम बड़े ही तुच्छ हैं। प. पू. श्री गुरुजी ने कहा कि "आप लोग तो चिकित्सा विज्ञान के ज्ञाता हैं अत: मैं भी आप लोगों से एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। पेनिसिलिन औषधि कैसे निर्माण की जाती है ? "उत्तर प्राप्त होने पर श्री गुरुजी ने कहा कि जिस प्रकार बासी अन्न पर जमा हुई फफूंदी जैसी तुच्छ वनस्पति पर प्रक्रिया कर वह औषधि जो कि औषधियों का राजा मानी गयी (Master drug) हैं निर्माण हो गई है तो क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि विशेषज्ञ के हाथों में पड़ने पर क्षुद्र से क्षुद्र वस्तु से भी उत्तम फल की प्राप्ति होती है। इस दृष्टि से हम भी संगठन- शास्त्र के विशेषज्ञ हैं।

संस्कार द्वारा मनुष्य निर्माण

लोग समझते है कि रेडियों पर प्रभावी भाषण आ जाने या समाचार पत्रों में छप जाने से उनका मन पर प्रभाव पड़ता है। परन्तु लेखों या भाषणों से मन पर

संस्कार नहीं होते है । यदि मन पर संस्कार करना है तो प्रतिदिन एक पवित्र वायुमंडल में मन को रखने की आवश्यकता हुआ करती है। इस दृष्टि से संघ ने अपनी एक कार्यपद्धति का विकास किया है। किन्तु जिनको पता नहीं हैं उनसे यदि यह कहा जाये कि कबड्डी खेलते-खेलते हम राष्ट्र का निर्माण करेंगे तो वे कहेंगे कि यह तो निरा पागलपन है। इसलिये यदि लोग इसे समझते नहीं है तो मैं समझता हूँ कि उनको दोष देना कुछ ठीक बात नही है। संस्कार करना संघ का कार्य है। प्रतिदिन की उपस्थिति संघ की कार्यपद्धति का केंद्रबिन्दू है। उसके माध्यम से हर एक व्यक्ति को सुसंस्कारित करना, इन सुसंस्कारित व्यक्तियों के बीच संगठन निर्माण करना अर्थात राष्ट्र के विषय में एकात्मता का भाव पैदा करना, इस एकात्मता के कारण संपूर्ण समाज के साथ अनुशासन बद्ध होकर चल सके एसी परस्थिति निर्माण करना तथा इस प्रकार एक अनुशासनबद्ध, राष्ट्रीय एकात्मकता के भाव से युक्त राष्ट्रपुरुष निर्माण करना संघ का कार्य है। किंतु संघ की कार्यपद्धति एसी है कि वह लोगों के समझ में नहीं आती। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि संघ की शद्वरचना ही एसी है कि वह लोगों के समझ में नहीं आती। बाहरी लोगों के द्वारा संगठन को स्वयंसेवक दल समझा जाता है जबकि संघ की परिभाषा में उसका अर्थ है, अंगांगी भाव। मनुष्य निर्माण का गलत अर्थ किया जाता है। संघ की कुछ विशेषतायें एसी है कि नया व्यक्ति उसे समझ नहीं पाता।

सेक्यूलर का सही अर्थ

आजकल संघ के विषय में बड़ा वाद विवाद चल रहा है। वैसे यह बात संघ के लिए उप -कारक सिद्ध हो रही है क्योंकि पहले तो लोग इतने उदासीन थे कि संघ के बारे में जानना ही नहीं चाहते थे। अब जबकि प्रतिदिन समाचार पत्रों में कुछ ना कुछ विवादास्पद बातें छपने लगी है तो लोग सोचने लग गए हैं। फलस्वरूप जिज्ञासा वस संघ में आने लगे हैं संघ समझ लेने के कारण वे संघ में सम्मिलित भी हो जाते हैं। इन दिनों में शाखाओं के स्वयंसेवकों की संख्या भी बढ़ी है। ऐसे भी व्यक्ति संघ के स्वयंसेवक बन गए हैं जिनके साथ संभव है कि संघ के स्वयंसेवक स्वभाविक परिस्थिति में संपर्क नहीं स्थापित कर पाते, परंतु विरोधियों की कृपा से उन्हें संघ के अंतर्गत ला दिया है परंतु उन्होंने संघ को समझ लिया अत: संघ के साथ एकात्म हो गए। इस तरह आजकल संघ के संबंध में प्रारंभ हुए विवाद के कारण संघ का लाभ हुआ है। संघ के सिद्धांत तथा आदर्श जानने के बारे में लोगों में जिज्ञासा निर्माण हो गई है। राष्ट्र क्या है राष्ट्रीयत्व क्या है आदि के बारे में लोगों के मन में जो उत्सुकता निर्माण हुई है वह विरोधी प्रचार के कारण ही है। वैसे संघ तो किसी का विरोधी नहीं है क्योंकि संघ तो सम्पूर्ण समाज है। अत: हम किसका विरोध करेंगे ? हाँ, यह हो सकता है कि समाज के ही कुछ अंश हमारा विरोध करे। यह बड़ी अच्छी बात है कि संघ के मौलिक सिद्धान्तों के विषय में विवाद निर्माण हुआ है। क्योंकि इसके कारण हमें संघ के मौलिक सिद्धान्त क्या है बताने का अवसर मिल गया। संघ के विरुद्ध यह आरोप लगाया जा रहा है कि वह साम्प्रदायिक है; निधार्मिक नहीं है। अब हिन्दुस्तान के राजनीतिज्ञ 'Secular' शद्ब का जो अर्थ लेते हैं वह अंग्रेजी भाषा के किसी भी शद्बकोश में नहीं मिलता। Secular का यही अर्थ है जो धार्मिक या आध्यात्मिक नहीं परन्तु क्षण

भंगुर (Temporal) है"। जिस अर्थ में हमारे राजनीतिज्ञ Secular शद्व को समझते हैं उनके लिए तो Jurisdictional या Non-denominational state जैसे शद्वों का व्यवहार होना चाहिए। अब उस शद्व से दूसरा अर्थ लिया जा रहा है। वैसे शद्वों के अर्थों में परिवर्तन होता ही रहता है। जैसे पहले Notorious शद्व का अर्थ Famous होता था परन्तु अब इसके विपरीत अर्थ होता है।

योरोप में प्रतिक्रियावादी राष्ट्रवाद

साम्प्रदायिक शद्व से सूचित किया जाता है कि अमुक राष्ट्रवादी नहीं है, राष्ट्रविरोधी है। अब इस विवाद से एक लाभ यह हुआ है कि राष्ट्रीयता को कुछ सम्मान प्राप्त हुआ है, क्योंकि जो संघ को गाली देने वाले लोग हैं, वे हमेशा अंतरिक्ष में घूमने वाले होते हैं। धरती पर उनके पैर कभी नहीं लगते। वे कहीं आन्तर्राष्ट्रीयता की बात कहेंगे तो कहीं आन्तर्राष्ट्रीयता एकता की बात कहेंगे। परन्तु कभी हिन्दुस्तान की बात नहीं करते। उनका कहना है कि राष्ट्रीयता एक संकुचित भावना है। वास्तव में ऐसी बात नहीं है। राष्ट्रीयता का, आन्तर्राष्ट्रीयता या आन्तर्राष्ट्रीयता एकता के साथ कोई विरोध नहीं है। परन्तु वह माना जाता है। क्योंकि पाश्चिमात्य देशों में वैसा समझा जाता है। लोग यह नहीं समझते हैं कि राष्ट्रीयता और आन्तर्राष्ट्रीयता का आपस में कोई मौलिक विरोध नहीं है। हिन्दुस्तान में तो बिल्कुल 'नहीं है। अवश्य योरोप में यह भेद माना गया है। उनका जो विकासक्रम है उसके कारण ही राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता परस्पर विरोधी माने गये। क्योंकि योरोप में राष्ट्रीयता का निर्माण और बलवान होना एक प्रतिक्रिया के रूप में हुआ है। योरोप का जो राष्ट्रवाद है

वह ३००-४०० वर्ष का है अर्थात् वह शैशवावस्था में है। हिन्दुस्तान का राष्ट्रवाद इतना प्राचीन है कि इतिहास ने जब कभी अपनी आँखें खोली होंगी उसने हमें राष्ट्र के रूप में ही देखा होगा। योरोप के विकासक्रम का इतिहास देखने से ज्ञात होता है कि वहाँ पहले पोप का अधिराज्य पूरे ईसाईजगत् पर था परन्तु बाद में धीरे-धीरे अपने-अपने पृथक् राष्ट्र का विचार बल पकड़ता गया। इंग्लैंड ने आठवे हेदृरी के समय पोप के हस्तक्षेप को अस्वीकार कर दिया। पोप तथा स्पेनिश आर्मिडा के विरोध में इंग्लेड का राष्ट्रवाद प्रखर हो उठा। नेपोलियन के आक्रमणों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप तेरह विभिन्न राज्यों में बँटे हुए जर्मन लोगों का राष्ट्रवाद प्रबल हुआ। आस्त्रिलियाई साम्राज्यवाद के आक्रमण के फलस्वरूप विभिन्न राज्यों में विभक्त हुए इटली में राष्ट्रीयता का भाव प्रखर हुआ। इस प्रकार योरोप में प्रतिक्रिया के रूप में ही राष्ट्रवाद प्रखर हुआ। इसके कारण वहाँ के लोगों की धारणा बन गयी है कि राष्ट्रों राष्ट्रों के बीच विरोध है। इसके कारण जब राष्ट्रवाद से हानि होने लगी तब आन्तर्राष्ट्रीयता की बात चल पड़ी। मार्क्स और लेनिन ने कहा कि राष्ट्रवाद को समाप्त किया जाय। परन्तु जब प्रथम महायुद्ध में विभिन्न देशों के कम्युनिस्ट लोगों ने भी अपने अपने देश के साथ गद्दारी नहीं की तो लेनिन को बहुत दु:ख हुआ। योरोप के विकासक्रम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण ही वहाँ यह भावना है कि राष्ट्रीयता और आन्तर्राष्ट्रीयता के बीच घोर विरोध है।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

भारत में राष्ट्रीयता का ऐतिहासिक विकासक्रम सर्वथा भिन्न है। एक तो हमें इस बात का पता नहीं है कि हमारा राष्ट्रीयत्व कब प्रारंभ हुआ। जब कभी इतिहास

ने अपनी आंखे खोली तब उसने यह देखा कि हिन्दु-राष्ट्रीयत्व विश्वसंस्कृति के लिए एक "Base of operation" के नाते काम कर रहा है, विश्व में एक सुसंस्कृत राष्ट्र के नाते हमारा देश विद्यमान था और हमारे पूर्वजों के मन में यह विचार कदापि नहीं था कि हम शेष विश्व के लोगों का शोषण करेंगे। उन्होंने यह सोचा था कि हम जैसे सुसंस्कृत हैं वैसा सारे लोगों को भी बनाएँगे। हमारा जो स्तर है उस पर सारे विश्व को लाएँगे। उनकी घोषणा थी कि "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"। आर्य शद्व गुपावाचक है, वंशवाचक नहीं है। इस प्रकार हमनें लोगों का सांस्कृतिक स्तर ऊंचा उठाने का विचार किया। अतएव "Hindu nationalism was the base of operation for the world civilization, for world culture."

योरोप में ढ़ांचेबंद विचार

योरोप की राष्ट्रीयता एक और बात में भिन्न है। उनके विकासक्रम के कारण वहाँ के लोगों के विचार बहुत ही "Compartmentalized" "ढाँचेबंद" है। वे सोचते हैं कि जो विभिन्न सामाजिक संगठन हैं उनमें परस्पर विरोध है। इसलिए वहाँ जितने सारे विचार होते हैं वे विरोध पर आधारित होते हैं, वहाँ व्यक्ति, परिवार, राष्ट्र, मानवता, विश्व आदि इकाईयों के बीच विरोध पाया जाता है। इसलिए वहाँ अधिकार क्षेत्र का (Jurisdiction) प्रश्न सदा उपस्थित होता है। "व्यक्ति और परिवार, व्यक्ति और समाज, राष्ट्र और मानवता के संबंधों में प्रत्येक का अधिकार क्षेत्र क्या हो, इसका विचार होता है। इसके कारण ही यहा अनेक 'वाद' तथा उन पर आधारित समाज रचनाएँ प्रचलित हुई है। जिस प्रणाली में व्यक्ति का दायरा बड़ा और समाज तथा राज्य का दायरा छोटा

होता है वह प्रजातंत्र; जिसमें समाज और राज्य का दायरा सर्वंकष होता है वह अधिनायक तंत्र या कम्युनिष्ट कहलाता है।

कम्युनिज्म में व्यक्ति को राज्ययंत्र का केवल निर्जीव पुर्जा माना जाता है (cog and wheel; nut and bolt of the state machinery) योरोप में व्यक्ति का दायरा और समाज तथा राज्य का दायरा दोनों में खींचातानी चल रहीं है।

व्यष्टि-समष्टि-परमेष्ठी में एकात्मता

हिन्दुस्तान का ऐतिहासिक विकासक्रम भिन्न प्रकार का रहा है। हमारे मनीषियों-ऋषि-मुनियों ने साक्षात्कार किया था कि व्यक्ति-परिवार, व्यक्ति- समाज, राज्य-आन्तर्राष्ट्रीयता में विरोध नहीं है, वरन् ये उत्तरोत्तर विकास की कड़ियां हैं। जिस प्रकार बीज, अंकुर, पौधा, शाखाएँ, पल्लव. फल-फूल नैसर्गिक विकास की अवस्थाएं हैं, उसी प्रकार व्यक्ति से लेकर मानवतावाद तक परस्पर-पूरक तथा पोषक विकासक्रम की अवस्थाएं हैं। इसलिए हमारे यहां यह वस्तुत: माना गया है कि (Objectively) व्यक्ति से लेकर परमेष्ठी तक जितनी भी सामाजिक इकाईयां हैं वे एक विकासक्रम मात्र हैं, तथा तत्त्वत: यह माना गया है कि जैसे जैसे व्यक्ति की चेतना का (Consciousness) का विकास होता जाता है वैसे वैसे वह चेतन जगत के साथ स्वयं अपने को एकात्म समझता है। छोटा बच्चा प्रारंभ में अपना ही विचार करता है परन्तु धीरे धीरे माता, पिता, भाई, बहन तथा संपूर्ण परिवार के साथ एकात्म हो जाता है। और बड़ा होने पर समाज, राष्ट्र के साथ एकात्म होता है। जब उसे आत्मज्ञान होता है तब वह संन्यास ग्रहण कर तीनों लोकों को स्वदेश 'स्वदेशो भुवनत्रयम्' मानता है। संक्षेप

में हमारे यहाँ यह धारणा है कि व्यक्ति का परिवार, राष्ट्र या विश्वबंधुता के साथ कोई विरोध नहीं है। वरन् उत्तरोत्तर आत्मचेतना के विकास की नैसर्गिक अवस्थाएं हैं। इस दृष्टि से वस्तुत: सामाजिकता (Social organism) तथा तत्त्वत: मनुष्य की आत्मचेतना का विकास हमारे यहां जीवन का लक्ष्य माना गया है। हमारे यहाँ समाजव्यवस्था की यह पद्धति रहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी पद्धति से अपना अपना विकास करे, अपने अपने गुणकर्म के आधार पर अपना जीवनक्रम निश्चित करे। प्रत्येक को अपने विकास की स्वतंत्रता रहे, सभी व्यक्ति और व्यक्ति समूह के मन में सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति एकात्मता का भाव रहे तथा वह अपने अपने विकास का जो फल है वह राष्ट्रदेवता के चरणों पर समर्पित करने के लिए सिद्ध रहे। इस प्रकार व्यक्ति तथा व्यक्तिसमूह का सम्पूर्ण विकास तथा राष्ट्र की एकात्मता दोनों का समन्वय किया गया है। इस व्यवस्था में व्यक्ति-समूह के विकास के लिए पूरी स्वतंत्रता है। व्यक्ति और राष्ट्र के परस्पर सम्बन्धो में एक लचीला अनुशासन हमारी विशेषता रही है। इस लचीले अनुशासन के कारण व्यक्ति से लेकर परमेष्ठी तक जो सारे सामाजिक घटक (Social organisms) हैं वे अपने अपने स्थान पर ठीक ढंग से कार्य करते हैं।

नेताओं को राष्ट्रीयता का साक्षात्कार

अब हिन्दुओं के संबंध में ये सारी बातें जानना आजकल बहुत प्रतिक्रिया-वादी माना जाता है। यदि आप जो भी हिंदु-विचार हैं उन्हें जानने की चेष्टा करेंगे तो आपको घोर प्रतिक्रियावादी कहा जाएगा। इसलिए इस विषय के संबंध में अपने यहाँ के नेताओं में अज्ञान पाया जाता है। उन्होंने सुन रखा है कि योरोप में

राष्ट्रीयता का और आन्तर्राष्ट्रीयता का मेल नहीं है। इसके आधार पर वे राष्ट्रीयता को कोसते हुए आन्तर्राष्ट्रीयता के अंतरिक्ष में विचरण करते रहे। अब संघ को गाली देने के निमित्त ही क्यों न हो बाध्य होकर उनको आसमान से जमीन पर आना पड़ा है। वे कहने लगे हैं कि राष्ट्रियता का भी अस्तित्व है, वह एक आदरणीय तथ्य है। यह एक बड़ा भारी लाभ मानना पड़ेगा।

दांभिकता !

विरोधियों द्वारा संघ को गाली देने के प्रयत्नों में एक दूसरा भी लाभ हुआ है। हमारे यहाँ राजनैतिक रचना ऐसी है कि जो जितनी अधिक विभेद की बातें करेगा उसको उतना लाभ तुरन्त हो सकता है। जो छोटी इकाई का अभिमान लेकर काम करेगा वह तुरन्त कहीं ना कहीं चुनकर आ सकता है। फलस्वरूप प्रादेशिक, भाषिकता जैसे विघटनकारी विवाद बढ़ रहे हैं। अब ये ही विघटनकारी प्रवृत्तियों से ग्रस्त सारे नेतागण मौखिक सहानुभूति दिखाने तथा लोगों के दिखावे के लिए ही क्यों न हो, राष्ट्रीयता का नाम ले रहे हैं। हृदय से तो ये लोग जातीय, प्रादेशिक, सांप्रदायिक, प्रादेशिक भाषाभिमानी हैं, केवल नाम के लिए राष्ट्रीयता का नाम लेते हैं। परन्तु उनकी दांभिकता भी एक दृष्टि से उपकारक ही कही जाएगी। अंग्रेजी में एक सुभाषित है- "Hypocrisy is a tribute paid by vice to virtue" इससे राष्ट्र, राष्ट्रीयता समझने और समझाने का अवसर हमें प्राप्त हुआ है।

हिन्दू शद्ब का अर्थ

राष्ट्र के विषय में हमारा और उनका जो मतभेद है वह बहुत पुराना है। १९२५ में संघ के संस्थापक डा. हेडगेवार जी को इस विषय में बड़े आग्रह से कहना पड़ा था की यह हिन्दू-राष्ट्र है। उस समय भी बड़े विवाद खड़े हुये थे। अब हिन्दू शद्ब का अर्थ क्या है यह बात सर्वप्रथम समझने की आवश्यकता है। कुछ दिन पूर्व एक विदेशी पत्रकार ने संघ के विषय में जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से मुझ से कहा कि आप लोग जो हिन्दू रिलिज़न लेकर चल रहे हैं। मैंने उन्हें बीच में ही टोकते हुए कहा कि चर्चा करने के पूर्व आप यह बताइये कि हिन्दू रिलिज़न क्या है ? और हिन्दू रिलिज़न नाम का कौनसा रिलिज़न हैं ? पत्रकार ने कहा कि वे विदेशी हैं अत: उन्हें ये सारी बातें विदित नहीं हैं। तब मैंने कहा कि रिलिज़न की परिभाषा है "Religion is relationship between a man and his maker'' अब इस बनाने वाले को कोई अल्लाह कहे, कोई भगवान् कहे, कोई जव्होवा कहे या स्वर्ग में रहने वाला पिता कहे, किसी भी नाम से संबोधित करे, परन्तु 'रिलिज़न' मनुष्य और भगवान् के बीच सम्बन्ध है। अत: 'रिलिज़न' सर्वथा व्यक्तिगत बात है। हिन्दुओं ने सदा ऐसा ही माना है। इसलिए जैसे अन्य देशों में यह धारणा है कि सबका रिलिजन एक होना चाहिए, हमारे यहाँ इसे अशास्त्रीय माना गया है। हमारे यहाँ तो यह कहा कहा गया है कि सब का एक रिलिज़न नहीं हो सकता। यदि रिलिज़न व्यक्ति और भगवान् के बीच सम्बन्ध हैं, तो प्रवृत्ति, रुचि, प्रकृति तथा शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, आध्यात्मिक स्तर की विभिन्नता के कारण व्यक्ति-व्यक्ति में भिन्नता होने से सबका एक ही रिलिजन कैसे हो सकता है ? इसलिए हमारे यहाँ सब के लिए एक किताब, एक मसीहा, एक रास्ता, एक अल्लाह, एक 'डायलेक्टिज्म'

नहीं माना गया है। हमारे यहाँ तो यह माना गया है कि जितनी रुचियाँ और प्रवृतियों हो सकती हैं उतने ही रास्ते हो सकते हैं। इसलिए हमारे यहाँ उपासना की पूरी स्वतंत्रता है। हिन्दुओं में भिन्न भिन्न प्रकार की उपासना पद्धतियाँ प्रचलित हैं। हमारे यहाँ तो यहाँ तक कहा गया है कि अलग अलग लोगों के लिए अलग अलग रिलिज़न होना आवश्यक भी है। यद्यपि सबका गन्तव्य स्थान एक है तथापि दिशाएँ अलग अलग रहेंगी। जैसे कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली और मद्रास में रहने वाले व्यक्तियों को नागपुर में पहुंचना हो तो प्रत्येक को अलग अलग दिशाओं में जाना होगा, क्योंकि प्रस्थानाथल भिन्न भिन्न है। सब के लिए एक दिशा बतलाना संभव नहीं है। इसी प्रकार हिन्दु समाज में कितनी ही परस्पर विरोधी बाते दिखाई देती हैं। भौतिकवादी तत्वज्ञान के जनक मार्क्स के कई शताद्वियों पूर्व हिन्दुस्तान में देवगुरु वृहस्पति ने " असतो सत् अजायत", कह कर भौतिकवादी " तत्वज्ञान का सूत्रपात किया तथा चार्वाक तक उसका एक सूत्रबद्ध तत्वप्रणाली के रूप में प्रभाव रहा। परंतु जब इस जड़वाद ने उपभोगवाद का रूप धारण कर लिया तब इसकी प्रगति रुक गयी। अब यहाँ जो आध्यात्मिक विचार हैं उनमें द्वैतवादी, अद्वैतवादी, आदि अनेक पंथ हैं। ईसाई मिशनरी जोन्स स्टेन्ले अपने एक पंथ की प्रस्तावना में लिखा है कि हिन्दुस्तान में उपासना की अनेक पद्धतियाँ प्रचलित हैं फिर भी प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको हिन्दू कहता है। यद्यपि कोई भूत-प्रेत-पिशाच को मानते हैं, कोई पत्थर-पेड़ की पूजा करते हैं, तो कोई गंगा के किनारे बैठकर आत्मा-अनात्मा-परब्रह्म की चर्चा करते हैं, तथापि सभी हिन्दू कहलाते हैं। इस बात का प्रस्तावना में उल्लेख करने के पश्चात् स्टेन्ले अपने पादरी भाईयों को सावधान करते हैं कि - Beware of this octopus of Hinduism "It may one day eat

up your Christ also." मैं समझता हूँ कि हमारे राजनैतिक नेताओं की तुलना में जोन्स स्टेंन्ले ने हिन्दुओं को अच्छा समझा है। जब सभी प्रकार की उपासना पद्धतियों का हिन्दुओं में समावेश हो सका है तो और दो चार उपासना पद्धतियों को अपने में समा लेना उसके लिए कोई बड़ी कठिन बात नहीं है, इस भय के कारण ही संभव है कि जोन्स स्टेंन्ले ने अपने पादरी भाइयों को हिन्दुओं से सावधान रहने की चेतावनी दी होगी।

विभिन्न धर्मों में विरोध नहीं है

वास्तव में रिलिजन के स्तर पर कोई झगड़ा खड़ा नहीं हो सकता है। विभिन्न मसीहाओं ने विभिन्न देशों में अपने अपने श्रोताओं की प्रवृत्तियों तथा परिस्थितियों के अनुसार ईश्वर-मनुष्य के संबंध में चर्चा विभिन्न भाषाओं में की है, परन्तु सबका सार मनुष्य-ईश्वर का सम्बन्ध ही है। यदि ईसा मसीह ने कहा कि "Glory be unto they name" तो हमारे यहाँ इसे द्वैत कहा गया है। ईसा मसीह का यह कथन कि "I am in my father, he in you and you in me ", हिन्दुओं का विशिष्टाद्वेत है। उनका यह कथन कि I and my father are one, I am the way, the truth and the life, हमारे "सर्व खल्विदं ब्रहा" "अहं ब्रह्रास्मि" तथा अद्वेत की ही प्रतिध्वनि है।

सब धर्मों का महासंघ-हिन्दुत्व

अब ऊपर के विचार हमारे विचारों में आ सकते हैं। क्योंकि हिन्दुओं में धर्म के बारे में कठमुल्लापन (Fanaticism) नहीं है। हमारे यहाँ तरह तरह के सम्प्रदाय

हैं, हम तो तेहत्तीस करोड़ देवताओं के पूजक हैं। अब जिनके पूजागृह में- Sanctum sanctorum इतना प्रशस्त स्थान है उनके यहाँ एक अल्लाह या एक मसीहा को स्थान मिल जाना कठिन बात नहीं है। वैसे हिन्दुत्व कोई 'वाद' नहीं है। अब सुविधा के लिए उसका उपयोग किया तो उसका अभिप्राय-सब धर्मों का संघ- The confederation of all religions including materialism है। मार्क्सवाद भी अब एक पूर्ण सम्प्रदाय बन गया है। एक ग्रंथ Das Capital, एक मसीहा मार्क्स, एका अल्लाह Dialecticism आदि साम्प्रदायिक विशेषताएं उसमें पायी जाती हैं। सब सम्प्रदायों के लिए हमारा sanctum sanctorum – पवित्र पूजागृह खुला है। इसलिए हिन्दू धर्म के कारण जो साम्प्रदायिकता की बात उठाते हैं, वे हिन्दू को समझ नहीं पाये हैं। हिन्दू नाम का कोई सम्प्रदाय नहीं है हिन्दुओं के कई सम्प्रदाय हैं। संघ के सरसंघचालक श्री गुरुजी ने तो यहां तक कहा है कि जब दूसरे सम्प्रदायों के प्रति सहिष्णुता की बात कहीं जाती है तो उसका अर्थ यह होता है कि एक श्रेष्ठ और दूसरा हीन सम्प्रदाय है तथा दूसरे के प्रति सहिष्णुता दिखाई जा रहीं है। यह विचार गलत है। उन्होंने कहा है कि सब धर्मों के प्रति हमारे मन में समादर की भावना है। मुसलमान कुरान पढ़ सकते हैं, मस्जिद में जा सकते है, धार्मिक नेता के नाते मुहंमद पैगंबर का स्मरण कर सकते हैं। ईसाई बाइबल पढ़ सकते हैं, गिरजाघरों में जा सकते हैं। यहां सबको उपासना की स्वतंत्रता है। परन्तु यहां राष्ट्र एक है, जन एक है, संस्कृति एक है इस बात का कदापि विस्मरण नहीं होना चाहिए।

साम्प्रदायिकता विरुद्ध राष्ट्रीयता

वास्तव में झगड़ा रिलिजन का नहीं है, तो झगड़ा इस बात का है कि रिलिजन और राष्ट्रीयता का अपना अपना न्यायोचित अधिकार क्षेत्र क्या होना चाहिए। यह झगड़ा हमारे कारण नहीं है। जब रिलिजन अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करता है तब संघर्ष निर्माण होता है। अब यह संघर्ष हिन्दुस्तान में ही होता है ऐसी तो बात नहीं हैं। शत प्रतिशत इस्लाम स्वावलम्बी देशों में भी यह संघर्ष हुआ है। मिस्त्र शत प्रतिशत इस्लाम मतावलम्बी देश है। वहाँ पहले खिलाफत थी। जिस प्रकार ईसाई जगत पर पोप का अधिराज्य चलता था उसी प्रकार इस्लाम जगत् पर खलीफा का प्रभुत्व माना जाता था। बाद में खिलाफत टूट गयी। यह सर्व विदित है कि हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने खिलाफत के पुनरुज्जीवन के लिए बड़ा प्रयास किया था और हिंदुओं ने स्वराज्य की लड़ाई में मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करने की आशा से, उनकी सहायता की। अब जिस तुर्किस्तान में खिलाफत की गद्दी थी उसी ने उसके पुनरुज्जीवन का विरोध किया। परन्तु हिन्दुओं ने उसके लिए बड़ा आग्रह किया। यहाँ से एक प्रतिनिधिमंडल तुर्किस्तान के अध्यक्ष मुस्तफा कमाल पाशा से भी मिलने गया था। कमाल पाशा ने इस प्रतिनिधिमंडल को बताया कि वे खिलाफत का पुनरुज्जीवन नहीं होने देंगे। तब प्रतिनिधिमंडल ने उन्हें समस्त मुस्लिम जगत् का खलीफा बनाने की लालच दिखाई। परन्तु कमाल पाशा जो कि एक राष्ट्रनेता थे, वह प्रस्ताव ठुकरा दिया। इतिहास में यह एक बड़ा अद्भुत दृश्य देखने को मिलता है कि एक ओर तो हिन्दू खिलाफत के पुनरुज्जीवन के लिए अपनी अधिकार-कक्षा के बाहर जाकर प्रयत्न कर रहे हैं और दूसरी ओर मुसलमान राष्ट्र का राष्ट्रपति मुस्तफा कमाल पाशा उसे अस्वीकार कर रहा है।

मिस्त्र में राष्ट्रीयता का उदय

मिस्त्र में राष्ट्रीयता की जागृति के साथ प्राचीन इतिहास का अभिमान जाग उठा। जो फैरोव्हा राजा थे, जिन्होंने प्रचण्ड पिरामिडों का निर्माण किया था उनके प्रति अभिमान की लहर दौड़ गयी तथा रास्तों, ग्रंथालयों को उनके नाम दिये जाने लगे और स्थान स्थान पर उनकी प्रतिमाएं स्थापित होने लगी। परन्तु धर्मान्ध लोगों ने यह कह कर कि फरोव्हा राजा काफिर थे उसका विरोध किया। अब फरोव्हा राजा मुहंमद पैगंबर के कई शताद्बियों पूर्व हुए थे अत: उनका मुसलमान होना कैसे संभव था। तब नव जागृत राष्ट्रवादी मिस्त्रियों तथा धर्मान्ध मिस्त्रियों के बीच जोरदार संघर्ष हुए। जब अफगानिस्तान में अमानुल्ला ने राष्ट्रीयता का भाव जगाने का प्रयास किया तो मुल्ला मौलवियों ने घोर विरोध कर उसको कुचल डाला। क्योंकि अमानूल्ला उतने प्रभावशाली नहीं थे। जब इरान में भी इस्लाम के उदय के पूर्व के अपने पराक्रमी महापुरुषों-रुस्तम, पहेलवी, बहराम-का अभिमान जागृत किया तब भी विरोध हुआ था परन्तु वहाँ राष्ट्रवादी शक्ति की विजय हुई। तुर्किस्तान ने तो ओटोमन साम्राज्य की ही नहीं तो इस्लाम के पूर्व के साम्राज्य की भी स्मृति जागृत रखी। उसने इस्लाम के नाम पर अब राष्ट्रवाद को ग्रहण करने से अस्वीकार कर दिया। उसने बुर्का हटा दिया, पोशाख में परिवर्तन कर दिया, तथा तुर्की भाषा में कुराण का अनुवाद कराया। कमाल पाशा का मुल्ला मौलवियों ने घोर विरोध किया। भला कुराण का कहीं अनुवाद भी हो सकता है इस रुढ़िवादी धर्मान्ध मुल्ला मौलवियों ने कमाल पाशा का घोर विरोध किया। तब कमाल पाशा तथा उनके पथप्रदर्शक झिया गाँक आल्प (Ziya Gok Alp) ने उनका डटकर विरोध किया। उन्होंने

कहा कि भगवान् इतना अनाड़ी नहीं है कि वह अरबी छोड़कर अन्य भाषाओं में की गई प्रार्थना नहीं समझ सकता। यह ऐतिहासिक सत्य है कि जिस दिन तुर्किस्तान में तुर्की भाषा में लिखा गया कुराण मस्जिदों में पढ़ा गया उस दिन सारे देश में भीषण रक्तपात हुआ। वहाँ एक और इस्लाम को गलत ढंग से सार्वजनिक जीवन में लाने वाले लोग थे तो दूसरी और नवजागृत राष्ट्रवादी लोग थे। अब हमारे यहाँ के अजातीयवादी, अन्तर्राष्ट्रीयतावादी, अंतरिक्षसंचारी नेताओं से पूछा जा सकता है कि भाईयों। तुर्किस्तान में कौनसा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ था ? फिर बताइये तो वहाँ भला दंगे क्यों हुए ! इस्लाम को मानने वाले मुस्तफा कमाल पाशा के मन में कुराण और मस्जिद के प्रति नितान्त आदर था परन्तु वह उसे व्यक्तिगत श्रद्धा का विषय मानते थे। उन्हें सार्वजनिक जीवन में धर्म का हस्तक्षेप होना अमान्य था।

शतप्रतिशत इस्लामी देशों में राष्ट्रवाद के साथ इस्लाम का जो गलत अर्थ लगाया जाता है वह वास्तव में इस्लाम और उसके प्रेषित महंमद पैगंबर के साथ अन्याय है। वैसे राष्ट्रीयता और इस्लाम का मेल बैठ सकता है। महंमद साहब ने स्पष्ट रूप से कहा है कि भगवान् ने हर एक जाति के लिए अपने अपने प्रेषितों का निर्माण किया है। (२) परन्तु इन बातों की ओर देखने का किसी को अवसर ही नहीं है। वे तो इस्लाम को केवल राजनैतिक सौदेबाजी का एक साधन बनाना चाहते हैं। राष्ट्रवाद के विरोध में इस्लाम है इस प्रकार की भ्रामक कल्पना सामने रखी जाने के कारण ही मुस्लिम देशों में दंगे-फिसाद हुए हैं। इंडोनेशिया इस्लामधर्मी है परन्तु उसकी राष्ट्रीय संस्कृति हिन्दू है। जिस समय इंडोनेशिया स्वतंत्र हुआ तब वहाँ के तत्कालीन राष्ट्रपति डा. सुकर्णो ने भारत के प्रधानमंत्री स्व. पं. जवाहरलालजी को पत्र लिखा था कि हम आप के

बड़े ऋणी हैं, क्योंकि आपकी जो सांस्कृतिक विरासत है उसका हम उपभोग कर रहे है।" इंडोनेशिया में मुसलमान बहु-संख्या है परन्तु वे श्री रामचंद्र को अपना राजपुरुष मानते हैं। वहाँ रामलीला तथा महाभारत की कथाएँ होती हैं। इसके कारण वहाँ इस्लाम अपवित्र नहीं हुआ है।

हम इस्लाम को मानते हैं इसलिए राष्ट्रीय संस्कृति को छोड़ देना चाहिए यह बात बिल्कुल गलत है। इस दृष्टि से हिन्दुस्तान में जो संघर्ष है वह हिन्दू विरुद्ध मुसलमान न होकर, इस्लाम का न्यायोचित अधिकार क्षेत्र क्या हो इस बात पर है। राष्ट्रीयता का और इस्लाम के न्यायोचित अधिकार क्षेत्र का अपने यहाँ विचार करने पर यह ज्ञात हो जाएगा कि इस राष्ट्र में हिन्दुत्व ही राष्ट्रीयत्व है। क्योंकि हिन्दू नाम का कोई धर्म नहीं है। यहाँ के निवासी सब हिन्दू हैं। क्या मुसलमान हिन्दू नहीं हैं ? ऐसे कितने मुसलमान हैं जो यहाँ अरबस्तान से आये हुए है ? ये सभी लोग यहीं के रहनेवाले थे। उनका जबरन धर्मान्तर किया गया। वे स्वतंत्रतापूर्वक अपनी उपासना पद्धति पर चल सकते हैं। किन्तु साथ ही वे यह भी कहें कि वे इस हिन्दू परिवार के, हिन्दूरक्त और खानदान के है। और राष्ट्र के नाते हिन्दू हैं। इस मातृभूमि के प्रति वहीं श्रद्धा रखें जो हमारे मन में है। इस देश के इतिहास के बारे में वहीं भावना रखें जो हमारे मन में है। इतिहास में मान-अपमान, उत्थान-पतन, वैभव-विपन्नता तथा सुख-दु:ख के जो अवसर आते हैं उनके विषय में उनकी और हमारी अनुभूति एक होनी चाहिए। आज की परिस्थिति तथा भविष्य की राष्ट्रीय आकांक्षाओं के विषय में उनके हमारे विचार, भाव एक होना चाहिए। यह तभी हो सकता है जब रिलिजन को नितांत व्यक्तिगत मान कर वे चलते हैं।

राष्ट्र एक इकाई

अपने यहाँ लोग हिन्दु-मुस्लिम एकता की बात करते हैं। परन्तु इसका अर्थ यह होता है कि हिन्दुस्तान में एक से अधिक इकाईयाँ हैं। परन्तु हमारा कहना है की सम्पूर्ण राष्ट्र एक इकाई है इस सत्य को ग्रहण कर चलने से सारे झगड़े समाप्त हो जाएगे।

आत्मसात् करने का कार्य

लोग शंका उठाते हैं कि अन्य लोगों को हिंदुओं ने आत्मसात किया होगा परन्तु मुसलमानों का प्रश्न वैसा नहीं हैं ? उन्हें आत्मसात् करना बड़ा कठिन कर्म है। वैसे उन्हें आत्मसात् करने में कौनसी कठिनाई है ? हमारे समाज ने सदा सब को आत्मसात् किया है और यदि राजनीतिज्ञ इस कार्य में अडंगा नहीं डालते तो आज भी हम सब को आत्मसात् कर सकते हैं। यह तो हमारी संस्कृति की विशेषता है, और उसमें वह क्षमता भी हैं। इतिहास काल में वह हुआ है, वर्तमान परिस्थिति में भी हुआ है।

मुसलमानों का भारतीयकरण

प्रारंभ में मुसलमानों में आक्रमक प्रवृति थी परंतु वे जैसे जैसे यहाँ स्थायी होते गए वैसे वैसे बुद्धिमान् मुसलमानों में इस देश की संस्कृति, धर्म जानने की उत्सुकता निर्माण हुई। जहांगीर तथा शहाज़हाँ के शासनकाल में हिंदुओं के अनेक संस्कृत ग्रंथों का फारसी भाषा में अनुवाद हुआ। (३) इन अनुवादों के

पढ़ने से उनके विचारों में परिवर्तन होने लगा। परन्तु औरंगजेब को यह लगा कि इससे तो मुसलमानों का हिन्दुकरण-राष्ट्रीयकरण हो रहा है। उसने धर्मान्धता धारण की। उसने अपने बड़े भाई दाराशिकोह को मरवा डाला । औरंगजेब की उसके प्रति यह शिकायत थी की वह विचारों से आधा हिंदू है। (४) मुसलमानों के राष्ट्रीयकरण की प्रक्रिया औरंगजेब को अपने राजनैतिक प्रभुत्व के मार्ग में बाधास्वरूप लगी और बाध्य होकर उसने उसका कड़ा विरोध किया।

श्रेष्ठ संस्कृति की पाचक शक्ति

मुसलमान नाम से जो विभिन्न जातियाँ अपने देश में आयी थी, उनका-हिन्दुकरण होने लगा था इस बात का विवरण कार्ल मार्क्स ने भी किया है। अपने पत्रों में वे लिखते है। "Arabs Turks, Tartars, Moguls who had successively overrun India, soon became Hinduised, the barbarian conquerors being, by an eternal law of history, conquered themselves by the superior civilization of their subjects." (२२ जुलाई १८५३ में कार्ल मार्क्स द्वारा लन्दन से लिखे गए पत्र में से उद्धृत)

(यद्यपि अरब, तुर्क, तातरि, मुगल लोगों ने हिन्दुस्तान को सफलता पूर्वक परास्त किया था किन्तु शीघ्र ही उनका हिन्दूकरण हो गया। क्यों कि यह निसर्ग का नियम है कि जंगली विजेताओं को विजित राष्ट्र की श्रेष्ठ संस्कृति के सामने परास्त होना पड़ता है।)

राष्ट्रीयकरण के मार्ग में बाधा

हिन्दुस्तान में यह प्रक्रिया चल रही थी परंतु जब यह देखा गया कि इसके कारण राजनैतिक प्रभुत्व की आकांक्षा में बाधा आती है तो उसमें कुछ लोगों ने अडंगे डालना शुरू कर दिया और उस प्रक्रिया को रोक दिया। अंग्रेजों के समय राजनैतिक नेताओं ने न्यूनगंड के कारण इस प्रक्रिया को रोक दिया। मुसलमानों को पृथक रहने दिया गया। उनसे कहा गया कि हम आपके साथ एकता करने जा रहे हैं अत: आप अपना पृथक, अस्तित्व बनाये रखो। इस प्रकार एकात्मता निर्माण होने नहीं दी गयी। अंग्रेजों के चले जाने के बाद भी एकात्मता निर्माण करने के कार्य में बाधा पैदा की जा रहीं है। यह सोचकर कि यदि वास्तव में सम्पूर्ण समाज एक हो जाता है और एक जन, एक संस्कृति, एक राष्ट्र के रूप में वह खड़ा हो जाता है तो मंत्रिपदों का फिर क्या होगा ? ४ करोड़ मत हमारे हाथ से चले जाएंगे। इसलिए आज भी राजनैतिक नेतागण मुसलमानों को पृथक रखने का प्रयास कर रहे हैं।किसी ने सच कहा है कि

"Politicians in every country have a knack of exploiting religious sentiments for the furtherance of their political ends when priesthood makes common cause with a gang of politicians, the combination becomes to formidable for an average believer."

वैसे औरंगजेब के पहले और बाद, और अंग्रेजों के शासनकाल में भी स्वाभाविक रूप से मुसलमानों का हिन्दुकरण या राष्ट्रीयकरण हो रहा था। (४) पाकिस्तान कल्पना के जनक अल्लामा इकबाल ने मुसलमानों को चिढ़ाने के लिए 'जवाब ए शिकवा' नामक कविता लिखी थी। कविता फारसी में है परन्तु उन्होंने उसका

अंग्रेजी अनुवाद स्वयं किया हुआ है। अब इकबाल साहब ने कविता दूसरे उद्देश्य से लिखी, परन्तु उसमें मुसलमानों के हिन्दूकरण के प्रति क्षोभ प्रकट किया गया है। डा शोकत अल्ला अंसारी ने कहा है कि "Islam in India in the Arabic version of Sanatan dharma". (५) इससे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि आत्मसात् करने की प्रक्रिया शुरू हो गयी थी। अब प्रक्रिया को क्यों रोका जा रहा है। मिली जुली संस्कृति हमारा सिद्धान्त है कि सब एक हैं। परन्तु कुछ राजनैतिक नेतागण संयुक्त राष्ट्रीयता, मिली जुली संस्कृति की भाषा बोलते । अब इन नेताओं से पूछा जाए कि "भाई हम तो रहे प्राचीन परम्परावादी, भला आधुनिक दुनिया यें आप एक तो भी उदाहरण बतलाइये जहां संयुक्त राष्ट्रीयता और मिली जुली संस्कृति" पादाकान्त किया तथापि शीघ्र ही उनका हिंन्दूकरण हो गया। इतिहास का यह सनातन की बात टिक सकी है। लोग इस संदर्भ में अमेरिका का उदाहरण बतलाते हैं।

परन्तु यह उदाहरण तो हमारे ही कथन की पुष्टि करता है। अमेरिका में योरोप के विभिन्न देशों से आए हुए जर्मन, फ्रांसीसी, डेनिश, स्वीडिश, अंग्रेज जाकर बसे और प्रथम महायुद्ध तक अपनी अपनी संस्कृति के अभिमानी बने रहे। परन्तु जब इंग्लैड और जर्मनी के बीच प्रथम महायुद्ध छिड़ गया तब अमेरिका निवासी ९० लाख जर्मनों के मन में इस प्रवृति का उदय हुआ कि अमेरिका में ऍंग्लौसैक्सन लोगों का प्रभुत्व क्यों चलने दिया जाए, क्यों न हम राज्य के अन्तर्गत अपना अलग राज्य स्थापित करें। तब प्रेसिडेंट विल्सन ने ज़र्मनवंश के सभी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। प्रथम महायुद्ध तक अमेरिका में इस बात पर गर्व किया जाता रहा कि यहां कोई भी आकर एकात्म हो जाता है। उस समय लिखे गये 'Melting pot' नामक नाटक में इन विचारों का प्रतिबिंब

दिखाई देता है। परन्तु जब जर्मनों ने विद्रोह का झंडा खड़ा किया तब लोगों की आंखें खुली और प्रथम महायुद्ध के पश्चात् सन् १९१८ से लेकर १९३९ तक तीन सांस्कृतिक आंदोलन वहाँ एंग्लोसैक्सन लोगों ने चलाए। उन्होंने एंग्लोसैक्सन राष्ट्रीयता को आधार मानकर वैसा डंके की चोट पर कहा। जितने भी गैर एंग्लोसेक्सन लोग थे उन्हें उस संस्कृति के साथ एकात्म होने के लिए कहा गया। इसके फलस्वरूप बाहर से आने वाले गैर एंग्लोसैक्सन लोगों के प्रवेश पर रोक लगायी गयी तथा सीमित संख्या में ही लोगों को प्रवेश देने के नियम बनाये गए। इस प्रकार आत्मसात् होने की क्रिया को प्रोत्साहन दिया गया। इसका सफल द्वितीय महायुद्ध के समय देखने को मिला। जब अमेरिका ने उसमें भाग लिया तब उसके सामने प्रथम महायुद्ध जैसी जर्मन लोगों की समस्या खड़ी नहीं हुई।

कैनेडा का उदाहरण

दूसरा उदाहरण कैनेडा का है। वहाँ फ्रांसीसी और अंग्रेज रहते हैं। प्रमुखता से वहाँ एंग्लोसैक्शन वंश के लोग रहते हैं। प्रथम दोनों ने मिली जुली संस्कृति की बात चलाई। प्रथम और द्वितीय महायुद्ध में इंग्लेंड और फ्रांस एक ही पक्ष में होने से कैनेडा में कोई समस्या पैदा नहीं हुई। परन्तु इसके बाद द गोल के फ्रांस के राष्ट्रपति बनने पर कैनेडा के फ्रांसीसी लोगों में पृथक फ्रांसीसी राष्ट्रीयता और फ्रांसीसी राज्य की बात बल पकड़ते गयी, द गोल फ्रांस को योरोप में प्रथम श्रेणी के राष्ट्र के रूप में देखना चाहते थे, नेपोलियन की महत्वाकांक्षा को पुन: साकार करना चाहते थे। उसी की प्रतिक्रिया कैनेडा के फ्रांसीसी लोगों में हुई। सेनापति द गोल जब कैनेडा के दौरे पर गये थे तब

उन्होंने एक नागरिक-अभिनंदन-समारोह के अवसर पर कह डाला कि अलग फ्रांसीसी राष्ट्र और राज्य की मांग सर्वथा न्यायोचित है। परंतु यह बता राजनैतिक शिष्टाचार के प्रतिकूल होने के कारण वहाँ बड़ा बवंडर निर्माण हुआ तथा द गोल को अपना दौरा अधूरा छोड़कर फ्रांस लौट जाना पड़ा। आज भी फ्रान्सीसियों द्वारा पृथकता का आंदोलन चलाया जा रहा है। इसका कारण यह है कि सांस्कृतिक एकात्मीकरण वहाँ नहीं हो पाया है। वहाँ तो यही बात चलती रहीं कि यह धर्मशाला हैं, कोई भी आए और जाए, अपना ही मकान है। इस प्रकार की गोल माल बात करने से एकात्मता निर्माण नहीं होती।

संकीर्णता का आरोप

हमें कहा जाता है कि हम बड़े संकीर्ण विचार करते है। हमने कहा हमारे यहाँ राष्ट्रीयता और अंतर्राष्ट्रीयता में विरोध नहीं है। परन्तु जिनका हृदय बहुत बड़ा है वे ऐसा कहते हैं। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् झेकोरस्लो व्हाकिया में स्लोव और झेक लोगों को रखा गया है। अब दोनों वंश के लोग कम्युनिस्ट होते हुए भी संस्कृति-भिन्नता के कारण एकात्म नहीं हो पाये हैं। वैसे दोनों अन्तर्राष्ट्रीयतावादी है अब उस देश में रूस द्वारा हस्तक्षेप किए जाने के एक वर्ष पूर्व स्लाव्ह लोगों ने कहा था कि उनका अलग राष्ट्र है तथा उनका अलग राज्य होना चाहिए यदि रूस ऐसा नहीं करना चाहता हो तो, स्लोव्ह और झेक लोगों के स्वायत राज्यों को स्वीकृति देकर, दोनों का संघराज्य बनाए। अब जहाँ अन्तर्राष्ट्रीयतावादी लोग भी एक दूसरे की संस्कृति में एकात्म होने के लिए तैयार नहीं होते हैं, झगड़ने के लिए खड़े हो जाते हैं वहाँ हमारे देश के लोग संयुक्त राष्ट्रीयता मिली जुली संस्कृति की बात चलाते है। अब जो

झेकोस्लोव्हाकिया, कैनेडा, अमेरिका में नहीं हो सका वह संयुक्त राष्ट्रीयता की बात भला हमारे यहाँ कैसे चल सकती है ?

शास्त्रशुद्ध भूमिका

अत: अब समय आ गया है कि हम शास्त्रशुद्ध भूमिका ग्रहण करें। यहां कुरान बायबिल बिल्कुल सुरक्षित हैं। अपने देश में एक जन है, एक संस्कृति है, एक राष्ट्र है इस बात का हमें अनुभव करना चाहिए और इसी दृष्टि से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने कहा है कि हम राष्ट्रीय हैं। यह जो कहा जाता है कि इसमें अन्य लोगों को प्रवेश नहीं है, बिल्कुल गलत है। बात इसके विपरीत है। बाकी लोग इसमें प्रवेश लेना नहीं चाहते हैं। हम से पूछा जाता हैं कि क्या एकाध राष्ट्रीय मुसलमान हो तो उसका संघ में प्रवेश हो सकता है ? हमारा कहना है कि जिस समय सामाजिक रूप से मुसलमान राष्ट्र के साथ एकात्म हो जाते हैं तो वे सारे हमारे हैं, वे सारे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में आ सकते हैं। यह बात भी सहीं नहीं हैं कि संघ में सभी हिन्दुओं को प्रवेश है और सभी अहिन्दुओं को प्रवेश नहीं है। श्री गुरुजी ने कहा है की वे पारसियों को हिन्दु ही समझते हैं। अब पारसी तो हिन्दू नहीं है। अत: यह कहना गलत है कि संघ में अहिन्दुओं को प्रवेश नहीं हैं। अब यह कहना भी ही नहीं है की हम सब हिन्दुओं को प्रवेश देते हैं। ७५ प्रतिशत कम्युनिस्ट हिंदू हैं परंतु हम उनको राष्ट्रीय नहीं समझते हैं। इसलिए उन्हें संघ में प्रवेश नहीं है। हिन्दू कम्युनिस्ट को प्रवेश नहीं और हिन्दु न होते हुए भी पारसियों को प्रवेश योग्य माना गया है, इस बात को ठीक प्रकार से समझना होगा।

अब प्रश्न यह है कि हम किस दृढ़ नींव पर राष्ट्र को खड़ा कर सकते हैं ? क्या मिली जुली संस्कृति, संयुक्त राष्ट्रीयत्व की कल्पना पर अभेद्य राष्ट्र खड़ा हो सकता है ? या फिर प्रत्येक को अपनी अपनी उपासना पद्धति की स्वतंत्रता प्रदान करते हुए उसमें बिल्कुल हस्तक्षेप न करते हुए राष्ट्र के नाते सब लोग एक हैं, हम सब एक परिवार के सदस्य हैं, एक ही राष्ट्र-पुरुष के अङ्ग-प्रत्यङ्ग हैं, हमारी यह मातृभूमि है, हम उसकी संतान हैं, सहस्त्रों वर्षों से इसकी संतान के रूप में अपना समाज यहां रहता आया हुआ है। राम-कृष्ण हमारे राष्ट्रीय पुरुष हैं, हमारे धार्मिक महापुरुष महंमद हो सकते हैं या ईसा मसीह हो सकते हैं, हमारे राष्ट्रीय ग्रंथ वेदादि है, कुरान या बायबिल हमारे धार्मिक ग्रंथ हो सकते हैं यहाँ की परम्परा राष्ट्रीय परम्परा है, यहां के जो उत्सव हैं वे हमारे राष्ट्रीय उत्सव हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण सात्मीकरण-हिंदूकरण जब तक नहीं होता तब तक मिली जुली संस्कृति वाली बात देश में दरार डालने वाली है। इस शास्त्रीय विचार को लेकर हमने कहा है कि हिन्दुत्व यहीं राष्ट्रीयत्व है। किन्तु प्रथम हिन्दू क्या है, राष्ट्र क्या है यह समझना चाहिए। इस तरह शास्त्रीय बातों को लेकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ कार्य कर रहा है।

राष्ट्र के संबंध में गंभीरता से विचार करना होगा। १९७२ में गद्दी कैसे प्राप्त होगी इतना छोटा विचार करने से राष्ट्र-निर्माण का कार्य नहीं होगा। भाई-भाई में दरार डालने वाली, बातें करने से हानि ही होगी। राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ सच्चा राष्ट्रीय संगठन है। वह राष्ट्र-निर्माण का कार्य कर रहा है। यहां राजनीति की बात नहीं है। सभी राजनैतिक दल के लोग यहाँ आ सकते हैं। हमने किसी के लिए दरवाजा बद नहीं किया है, परन्तु उन्होंने हमारे लिए दरवाजा बंद किया है। सभी लोग इसमें आ सकते हैं और इस तरह से सम्पूर्ण हिन्दूसमाज अर्थात्

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, हिंन्दुराष्ट्र अर्थात् राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ है। इसको हम निकट से देखें, समझे, पहचाने, और फिर अपनी आत्मा का जो अभिप्राय होगा, निर्णय होगा उसके अनुसार संघ के प्रति आप अपनी प्रतिक्रिया आचार-व्यवहार में लाएँ।

भाषण में उल्लेखित संदर्भों का विवरण

1. “Ziya Gokalp, who was the inspirer of modern Turkey, wanted” to build a new Turkey which would remove the gulf between Ottoman Turks and their Turanians ancestors.... He wanted to lay down a new cultural foundation with the material he had collected about cultural and political institutions from the pre-Islamic period of Turkish History. He believed that the Islam which was established by the Arabs would not suit “our purpose.” “If we wish not to return to our age of ignorance we at present need a religious reform which may conform with our temperaments.”

2. “The HOLY KORAN did not repeal the essential truths established by the religions that had gone before. God has blessed every nation with its own prophets. “For every people there is a guide” (Koran XXII—3). “There is no distinct group of men amid whom never arose a Varner” (Koran XXXV-23). Consequently Hazrat Mirza Ghulam Ahmed Wrote that teachers, to whatever land they belonged, whose teachings have been operative for a good length of time and have been accepted by large section of the human race, must be held to be God sent, for Allah never decrees that false prophets should flourish. He consequently declared that the teachings of the Lord Buddha, Shri Krishna and Shri Ramachandra were undoubtedly of divine origin, though “later tampering’s or interpolations might have clouded, or even grabbled, the original teachings of these great teachers”

3. Hinduism had been influencing the Muslim elite since the days of Alberuni. Abul Fazl translated the elements of the Shad-Darshanas for the benefits of the Muslims. During Akbar’s regime Muslims began to take greater interest in Sanskrit Literature and the Hindu religion. During that period the Mahabharata the Ramayana and the Atharva Veda were made accessible to Muslims. Akbar realized that with the……… Islam

alone he would not be able to subjugate his H......... jects intellectually. Hence his attempt to evolve a ne...

gion. i. e., Din Ilahi, Divine faith. Dara presented that……...tual thrust of Hinduism to the Muslim intellectuals by trar........ ing into Persian the Bhagwat Gita, the Upanishads, Prabodha Chandrodaya, Yoga Vasishtha and other scriptures. The following poem of Dara is indicative of the influence of our national culture on his mind:

“Thou art in the Kaaba as well as in the Somnath Temple.

In the convent as Well as in the Tavern,

Thou art the same time the light and the moth,

The wine, and the Wife, the sage,

And, the fool, the friend and the stranger.”

Students of Advaitavada would be able to trace the source of Dara’s inspiration. There are reasons to believe that what irritated and perturbed Aurangzeb most, was the susceptibility of the high ranking Muslim minds to the influence of the national culture. Even KARL MARX, a foreigner, could not fail to discover these significant facts. On July 22, 1853, he wrote from London, “Arabs, Turks, Tartars, Moguls, who had successively overrun India, soon became hinduised, the barbarian conquerors being by an eternal law of history; conquered themselves by the superior civilization of their subjects.

4. ALLAMA IQBAL, for example, expresses his feelings in this respect in his Jawabi-Shikwa in the following words:

“Unto a nation faith is life; you lost your faith and fell;

When gravitation fails, must cease; Concourse celestial.”’

(IX—2)

“From Christians you have learnt your style,
Your culture from Hindus;
How can a race as Muslims pass?
Who shame even the Jews?

(XVII—2)

(P.T.O.)

"Upon your nation's sky you rose,
Like stars of brilliant hue,
The lure of India's idols made,
Even Brahmins out of you."

(XXII-1)

5. "as late as in 1944, Dr. Shaukat Ullah Ansari expressed grave doubt about the willingness of the entire Muslim population to welcome Pakistan."

Dr. Ansari further says, "In as much as racial differences exist in India, racially Hindu and Muslims of one province have greater affinity than Muslims of two provinces.... Awns of the Punjab, though Muslims, retain Hindu name and keep their genealogies in the Brahmanism fashion.... In the matter of marriages, certain Muslims fellow Hindu customs and forms, and among some Muslims the Hindu low of marriage, guardianship and inheritance is applied.... In Hindu bow down before an image of deity, Muslims bow down before the graves of Saints of Pirs. Music and dance are prohibited by Islam, but in some Khanqahs your hear sweet music and see elegant dancing. Islam in India is an Arabic version of Sanatana Dharma.

मुल्य 50 नये पैसे

प्रकाशक

मुद्रक

पु. मो. सोनटक्के

दि. मि. धाकस

कार्यवास भारतीय विचार साधना

नाग मुद्रणालय, रूईकर पथ,

नागपुर

नागपुर